Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
May 2024 5(5), 720–723

RELEVANCE OF JUSTICE AND EQUALITY IN AMBEDKAR THOUGHT

अम्बेडकर चिंतन में न्याय और समानता की प्रासंगिकता

Sanjana Singh [1], Jyoti Khande [2]

[1] Associate Professor, History, Kalinga University, Raipur, Chhattisgarh
[2] (Research Scholar) Associate Professor, History, Kalinga University, Raipur, Chhattisgarh

ABSTRACT

English: Ambedkar, the chief architect of the Indian Constitution, was a leading thinker and social reformer whose vision was centered on justice and equality. His philosophy was deeply influenced by his personal experiences of caste-based discrimination, political philosophy, constitutionalism, social justice and his interaction with scholars. In contemporary society where social and economic inequalities persist despite legal safeguards, Ambedkar's ideas are highly relevant. At the core of Ambedkar's philosophy is the idea that justice should be social, economic and political. He believed that political democracy is incomplete unless complemented by social and economic democracy. His advocacy for affirmative action, labour rights, women's empowerment and the destruction of caste discrimination was rooted in his vision of an egalitarian society where every individual, regardless of gender, had access to dignity, education and economic opportunities. An emphasis on constitutional morality was another important aspect of his philosophy. He argued that true justice could only be achieved when society followed the moral principles embedded in the Constitution rather than traditional hierarchies. The Fundamental Rights and Directive Principles of State Policy in the Indian Constitution reflect his commitment to justice, and ensure that marginalised communities receive legal protection and access to opportunities for development and representation. According to these constitutional provisions, social inequality, economic inequality and gender injustice manifest in caste-based discrimination. Dalits, Adivasis and marginalised groups still face exclusion, inadequate educational and employment opportunities and socio-political discrimination. Ambedkar's vision is important in addressing these systemic challenges. His call to "educate, agitate, organise" inspires movements advocating for the rights of oppressed communities. His work is studied globally in discussions on human rights, discrimination, and political representation. His ideas serve as a blueprint for those seeking to build an inclusive and democratic society. Justice and equality, in Ambedkar's view, are not merely legal concepts but fundamental social imperatives. His vision urges enlightened individuals of society to move beyond symbolic reforms and work towards real change by ensuring equal access to rights, opportunities, and dignity for all individuals. As long as oppression and discrimination exist, Ambedkar's philosophy will remain a guiding force for achieving social justice.

Hindi: भारतीय संविधान के मुख्य वास्तुकार अंबेडकर, एक अग्रणी विचारक और समाज सुधारक थे जिनकी दृष्टि न्याय और समानता पर केंद्रित थी। उनका दर्शन जाति-आधारित भेदभाव के उनके व्यक्तिगत अनुभवों, राजनीतिक दर्शन, संवैधानिकता, सामाजिक न्याय और विद्वानों के साथ उनके संपर्क से गहराई से प्रभावित था। समकालीन समाज में जहाँ सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ कानूनी सुरक्षा उपायों के बावजूद बनी रहती हैं, वहाँ अंबेडकर के विचार अत्यधिक प्रासंगिक हैं। अम्बेडकर दर्शन के मूल में यह विचार है कि न्याय सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक होना चाहिए। उनका मानना था कि राजनीतिक लोकतंत्र, तब तक अधूरा है, जब तक कि सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र द्वारा पूरक न हो। सकारात्मक कार्रवाई, श्रम अधिकार, महिला सशक्तिकरण और जातिगत भेदभाव के विनाश के लिए उनकी वकालत एक समतावादी समाज की उनकी दृष्टि में निहित थी, जहाँ लिंग की परवाह किए बिना, हर व्यक्तिकी गरिमा, शिक्षा और आर्थिक अवसरों तक पहुँच थी। संवैधानिक नैतिकता पर जोर उनके दर्शन का एक और महत्त्वपूर्ण पहलू था। उन्होंने तर्क दिया कि सच्चा न्याय केवल तभी प्राप्त किया जा सकता है जब समाज पारंपरिक पदानुक्रमों के बजाय संविधान में अंतर्निहित

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i5.2024.4473

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

नैतिक सिद्धांतों का पालन करता है। भारतीय संविधान में राज्य नीति के मौलिक अधिकार और निर्देशक सिद्धांत न्याय के लिए उनकी प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं, और सुनिश्चित करते हैं कि हाशिए के समुदायों को विकास और प्रतिनिधित्व के अवसरों तक कानूनी सुरक्षा और पहुँच प्राप्त होती है। इन संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार, सामाजिक असमानता, आर्थिक असमानता और लैंगिक अन्याय जाति-आधारित भेदभाव में प्रकट होती है। दलित, आदिवासी और हाशिए के समूह अभी भी बहिष्करण, अपर्याप्त शैक्षिक और रोजगार के अवसरों और सामाजिक-राजनीतिक भेदभाव का सामना करते हैं। इन प्रणालीगत चुनौतियों को संबोधित करने में अंबेडकर की दृष्टि महत्त्वपूर्ण है। "शिक्षित, आंदोलित, संगठित" करने के लिए उनका आह्वान उत्पीड़ित समुदायों के अधिकारों की वकालत करने वाले आंदोलनों को प्रेरित करता है। मानवाधिकारों, भेदभाव और राजनीतिक प्रतिनिधित्व पर चर्चा में उनके काम का विश्व स्तर पर अध्ययन किया जाता है। उनके विचार एक समावेशी और लोकतांत्रिक समाज का निर्माण करने के इच्छुक लोगों के लिए एक खाके के रूप में काम करते हैं। अम्बेडकर के विचार में न्याय और समानता न केवल कानूनी अवधारणाएँ हैं, बल्कि मौलिक सामाजिक अनिवार्यताएँ हैं। उनकी दृष्टि समाज के प्रबुद्ध व्यक्तियों से आग्रह करती है कि वे प्रतीकात्मक सुधारों से आगे बढ़ें और सभी व्यक्तियों के लिए अधिकारों, अवसरों और गरिमा के लिए समान पहुँच सुनिश्चित करके वास्तविक परिवर्तन की दिशा में काम करें। जब तक उत्पीड़न और भेदभाव मौजूद है, अंबेडकर का दर्शन सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए एक मार्गदर्शक शक्ति बना रहेगा।

1. अंबेडकर की न्याय की दृष्टि: एक समग्र दृष्टिकोण।

अंबेडकर ने न्याय को सामाजिक परिवर्तन के लिए एक आवश्यक स्तंभ के रूप में देखा। न्याय की उनकी अवधारणा को स्वतंत्रता, समानता और बिरादरी के सिद्धांतों से जोड़ा गया था, जिसे उन्होंने एक न्यायपूर्ण समाज की नींव के रूप में देखा था। उनका मानना था कि राजनीतिक लोकतंत्र, वोट और कानूनी समानता के अधिकार को बढ़ाता है परंतु सामाजिक और आर्थिक न्याय के साथ ही पूरक होता है। उन्होंने जाति व्यवस्था को एक पदानुक्रमित और भेदभावपूर्ण संस्थान के रूप में देखा, जिसने लाखों दलित लोगों को बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित कर दिया। इन अन्यायों का मुकाबला करने के लिए उन्होंने सकारात्मक कार्रवाई, शिक्षा और रोजगार में आरक्षण और हाशिए के समुदायों के उत्थान के लिए कानूनी सुरक्षा उपायों की वकालत की। भारतीय संविधान के मुख्य वास्तुकार के रूप में उनकी भूमिका न्याय की उनकी दृष्टि की अभिव्यक्ति थी। उन्होंने संविधान में कानून के समक्ष समानता, अस्पृश्यता का उन्मूलन, और अल्पसंख्यक अधिकारों की सुरक्षा जैसे मौलिक अधिकारों को निहित किया। राज्य नीति के निर्देशन सिद्धांत आर्थिक और सामाजिक समानता को प्रोत्साहित करते हैं, न्याय के लिए उनकी प्रतिबद्धता को भी दर्शाते हैं। उन्होंने तर्क दिया कि समाज को रीति - रिवाजों के बजाय तर्कसंगत, उचित और न्यायसंगत सिद्धांतों के आधार पर कार्य करना चाहिए जो भेदभाव को समाप्त करते हैं। यह आज विशेष रूप से प्रासंगिक है क्योंकि सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष विभिन्न रूपों में जारी है।

2. समानता सामाजिक लोकतंत्र की नींव के रूप में अंबेडकर

समानता केवल एक कानूनी अवधारणा नहीं थी, बल्कि वास्तव में लोकतांत्रिक समाज के लिए एक मौलिक शर्त थी। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि अकेले कानूनी समानता सामाजिक और आर्थिक समानता के बिना व्यर्थ थी। उनका मानना था कि जाति-आधारित भेदभाव और आर्थिक असमानताएँ भारत में सच्चे लोकतंत्र में सबसे बड़ी बाधाएँ थीं। उनके अनुसार जाति पदानुक्रम को बरकरार रखने वाला एक समाज वास्तव में कभी भी लोकतांत्रिक नहीं हो सकता है, क्योंकि जाति ने जन्म के आधार पर व्यक्तियों के लिए समान अवसरों को नकार कर दिया था। समानता को बढ़ावा देने के उनके प्रयास शिक्षा और रोजगार में आरक्षण नीतियों के लिए उनकी लड़ाई में स्पष्ट थे, जो यह सुनिश्चित करते थे कि ऐतिहासिक रूप से हाशिए के समुदायों की संसाधनों और अवसरों तक पहुँच हो। वे उन कानूनों को तैयार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे, जो सकारात्मक कार्रवाई के लिए सुविधा प्रदान करते थे। वे मानते थे कि संरचनात्मक भेदभाव को केवल प्रतीकात्मक संकेतों के बजाय प्रणालीगत उपायों की आवश्यकता होती है। उनका मानना था कि हाशिए के समुदायों को सशक्त बनाने और सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न के चक्र को तोड़ने के लिए शिक्षा सबसे शक्तिशाली उपकरण था। उन्होंने सामाजिक अन्याय को चुनौती देने के लिए ज्ञान और जागरूकता की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा, "शिक्षित बनें, आंदोलन करें, संगठित रहें"। वह लैंगिक समानता के लिए एक मजबूत वकील भी थे क्योंकि वे यह पहचानते थे कि महिलाओं को, विशेष रूप से निचली जातियों के लोगों को वर्षों तक दोहरे भेदभाव का सामना करना पड़ा। उन्होंने महिलाओं के अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी, जिसमें शिक्षा, रोजगार और सार्वजनिक जीवन में भागीदारी शामिल थी। हिंदू कोड बिल में उनका योगदान, जिसका उद्देश्य महिलाओं को विवाह, विरासत और संपत्ति में समान अधिकार प्रदान करने के लिए व्यक्तिगत कानूनों में सुधार करना था, लैंगिक न्याय के लिए उनकी प्रतिबद्धता के लिए एक वसीयतनामा है। यह आर्थिक दृष्टि एक राज्य के नेतृत्व वाले विचार विकास मॉडल में निहित थी, जिसने धन और संसाधनों का उचित वितरण सुनिश्चित किया। उनका मानना था कि आर्थिक लोकतंत्र, राजनीतिक लोकतंत्र जितना महत्त्वपूर्ण था। श्रम अधिकारों, निष्पक्ष मजदूरी और भूमि सुधारों के लिए उनकी वकालत का उद्देश्य एक ऐसा समाज बनाना था, जहाँ आर्थिक न्याय केवल अभिजात वर्ग का विशेषाधिकार की बजाय सभी के लिए एक वास्तविकता थी।

3. संवैधानिक नैतिकता और सामाजिक न्याय

डॉ० बी.आर. अंबेडकर का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान एक न्यायपूर्ण समाज के लिए नींव के रूप में संवैधानिक नैतिकता पर उनका जोर था। उनका मानना था कि न्याय और समानता व्यक्तियों या पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं की सद्भावना पर निर्भर नहीं होने चाहिए, अपितु संविधान में निहित होने चाहिए और उन्हें राज्य द्वारा बरकरार रखा जाना चाहिए। अंबेडकर के लिए संवैधानिक नैतिकता का मतलब था कि एक समाज को दमनकारी रीति -रिवाजों, धार्मिक हठधर्मिता या पदानुक्रमित मानदंडों के बजाय तर्कसंगत और नैतिक सिद्धांतों द्वारा शासित होना चाहिए। यह एक सामाजिक अनुबंध है जो एक विविध और लोकतांत्रिक समाज की आकांक्षाओं को दर्शाता है। भारतीय संविधान के द्वारा सभी नागरिकों के लिए आलेखन, संस्थागत न्याय, समानता और गरिमा का अधिकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। संविधान में निहित मौलिक अधिकार, जैसे कि समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14), अस्पृश्यता का निषेध (अनुच्छेद 17), और स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19), सीधे सामाजिक न्याय के लिए अंबेडकर की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। उन्होंने संविधान के माध्यम से विशेष रूप से अनुसूचित जातियों (एससीएस), अनुसूचित जनजातियों (एसटीएस), और अन्य पिछड़े वर्गों (ओबीसी) के लिए शिक्षा और रोजगार में आरक्षण के प्रावधान के द्वारा सकारात्मक कार्रवाई की एक रूपरेखा प्रदान की। ये प्रावधान ऐतिहासिक अन्याय को ठीक करने और हाशिए के समुदायों को उन अवसरों तक पहुँचने के लिए सक्षम करने के लिए थे जिन्हें सदियों से उनसे दूर कर दिया गया था। सामाजिक न्याय के बारे में अंबेडकर की दृष्टि का एक महत्त्वपूर्ण पहलू राज्य नीति (डीपीएसपी) के निर्देशन सिद्धांत थे, जिसका उद्देश्य आर्थिक असमानताओं को पाटना था। ये सिद्धांत राज्य को आय असमानताओं को कम करने, काम करने का अधिकार हासिल करने, शिक्षा प्रदान करने और सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने की दिशा में काम करने के लिए प्रतिबद्ध करते हैं। अंबेडकर का मानना था कि जब तक आर्थिक संरचनाओं में सुधार नहीं किया जाता तब तक सामाजिक न्याय एक भ्रम बना रहेगा। संवैधानिक सुरक्षा उपायों के अनुसार अंबेडकर को पता था कि कानून अकेले समाज को बदल नहीं सकते हैं जब तक कि वे सामाजिक चेतना और समानता के लिए सार्वजनिक प्रतिबद्धता द्वारा समर्थित न हों। उन्होंने राजनीतिक लोकतंत्र और सामाजिक लोकतंत्र के बीच एक विरोधाभास के खिलाफ बार-बार चेतावनी दी और इस बात पर जोर दिया कि भारत ने एक लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली को अपनाया था परंतु जाति-आधारित भेदभाव और आर्थिक असमानता की दृढ़ता ने इसकी सफलता के लिए एक गंभीर खतरा पैदा कर दिया। सांस्कृतिक परंपराएँ आज के संदर्भ में अत्यधिक प्रासंगिक हैं। समकालीन भारत में जाति-आधारित भेदभाव, धर्मनिरपेक्षता, लैंगिक अधिकार और आरक्षण नीतियों जैसे मुद्दों पर बहस प्रगतिशील संवैधानिक मूल्यों और पारंपरिक सामाजिक पदानुक्रमों के बीच संघर्ष को प्रतिबिंबित करने के लिए जारी है। उन्होंने जो सिद्धांत निर्धारित किए हैं, वे कानूनी सुधारों, नीतिगत निर्णयों और सामाजिक सक्रियता के लिए एक मार्गदर्शक ढांचा प्रदान करते हैं, जिसका उद्देश्य सच्चे न्याय और समानता को प्राप्त करना है।

4. सामाजिक असमानता के खिलाफ निरंतर संघर्ष

भले ही भारतीय संविधान न्याय और समानता को बनाए रखने के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचा प्रदान करता है, फिर भी जाति भेदभाव, आर्थिक असमानता, और लैंगिक असमानता विभिन्न रूपों में बनी रहती है। भारत में सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष बहुत दूर है, जिससे अंबेडकर की शिक्षाएँ पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हैं। सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक जाति-आधारित भेदभाव ग्रामीण भारत और हाशिए के शहरी क्षेत्रों में बना हुआ है। अस्पृश्यता और जाति-आधारित हिंसा को प्रतिबंधित करने वाले कानूनों के बावजूद, सम्मान आधारित हत्याओं की घटनाएँ, हाथ से मैला हटाने की प्रथा, सामाजिक अस्थिरता और दलित अत्याचार जारी हैं। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचारों की रोकथाम) अधिनियम, 1989 को इस तरह के अपराधों पर अंकुश लगाने के लिए लागू किया गया था, फिर भी सामाजिक पूर्वाग्रहों और प्रशासनिक उदासीनता के कारण कई क्षेत्रों में कार्यान्वयन कमजोर रहता है। आर्थिक असमानता एक और दबाव वाला मुद्दा है। जबकि आर्थिक उदारीकरण ने विकास के अवसर पैदा किए हैं, तब भी लाभ सभी लोगों में समान रूप से वितरित नहीं किए जाते हैं, हाशिए के समुदायों को अक्सर पीछे छोड़ दिया जाता है। दलित, आदिवासी और अन्य उत्पीड़ित समूह अभी भी उच्च बेरोजगारी दर, भूमिहीनता और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच की कमी का सामना करते हैं। अंबेडकर ने चेतावनी दी थी कि जब तक समाज की आर्थिक संरचना में सुधार नहीं किया गया, तब तक सामाजिक लोकतंत्र हासिल नहीं किया जाएगा। उन्होंने निम्न वर्गों के उत्थान के लिए राज्य के नेतृत्व वाले औद्योगीकरण, भूमि के पुनर्वितरण और श्रम अधिकारों का प्रस्ताव रखा था। आज समावेशी आर्थिक नीतियों, न्यूनतम मजदूरी और सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों की मांग उनके विचारों में गूँजती है। असमानता भी एक महत्त्वपूर्ण चिंता का विषय है। अंबेडकर महिलाओं के अधिकारों के लिए एक मजबूत वकील थे और हिंदू कोड बिल का मसौदा तैयार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसका उद्देश्य महिलाओं को विवाह, विरासत और संपत्ति में समान अधिकार प्रदान करना था। दुर्भाग्य से इन अधिकारों में से कई से संघर्ष अभी भी जारी है। महिलाओं, विशेष रूप से हाशिए के समुदायों से, अभी भी भेदभाव, घरेलू हिंसा, मजदूरी अंतराल, और शिक्षा और रोजगार तक सीमित पहुँच का सामना करना पड़ता है। दमनकारी समुदायों के उत्थान के लिए अंबेडकर की रणनीति का केंद्रीय विषय था। जाति-आधारित भेदभाव अभी भी स्कूलों, कॉलेजों और कार्यस्थलों में मौजूद है, जिसमें दलित छात्रों और पेशेवरों के लिए बहिष्करण, उत्पीड़न और असमान अवसरों के उदाहरण हैं। उच्च शिक्षा और अभिजात वर्ग संस्थानों में प्रतिनिधित्व की कमी वास्तविक समानता के लिए एक बाधा बनी हुई है। सामाजिक न्याय और लोकतंत्र, सामाजिक दृष्टिकोण को बदलने के बारे में है। "शिक्षित, आंदोलित, संगठित" करने के लिए उनका आह्वान, असमानताओं के खिलाफ लड़ाई में महत्त्वपूर्ण है। दलित अधिकारों, श्रम अधिकारों, महिला सशक्तिकरण और सकारात्मक कार्रवाई की वकालत करने वाले सामाजिक आंदोलनों ने उनकी शिक्षाओं को अपनाया।

5. समकालीन सामाजिक आंदोलनों में अंबेडकर की विरासत

अंबेडकर दर्शन भारत और विश्व स्तर पर सामाजिक न्याय आंदोलनों, नीति-निर्माण और शैक्षणिक प्रवचन के लिए प्रेरणा का एक स्रोत बना हुआ है। उनके विचारों ने भेदभाव और असमानता को कम करने के उद्देश्य से दलित आंदोलनों, नारीवादी सक्रियता, श्रम संघर्षों और नीतियों को प्रभावित किया है। दलित अधिकार आंदोलन अंबेडकर के संघर्ष की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक है। संगठन और कार्यकर्ता जाति-आधारित हिंसा, मैला ढोने और रोजगार और शिक्षा में भेदभाव के खिलाफ लड़ना जारी रखते हैं। 1970 के दशक के दलित पैंथर आंदोलन और समकालीन दलित-बहुजन राजनीतिक जुटाव जैसे आंदोलनों ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सामाजिक गरिमा के लिए उनके आह्वान को दर्शाया है। उनका मानना था कि जाति और पितृसत्ता आपस में जुड़े हुए हैं, जिससे दलित नारीवाद का उदय हुआ है, जो दलित महिलाओं के अद्वितीय संघर्षों पर प्रकाश डालता है, जो जाति और लैंगिक उत्पीड़न दोनों का सामना करते हैं। राज्य के नेतृत्व वाले आर्थिक विकास, कार्यकर्ता के अधिकारों और भूमि सुधारों के बारे में उनका दृष्टिकोण बेरोजगारी, अनुचित मजदूरी और कंपनी शोषण के मुद्दों के रूप में प्रासंगिक है। कई श्रम अधिकार समूह निष्पक्ष मजदूरी, श्रम की गरिमा और श्रमिकों के कल्याण के लिए राज्य की जिम्मेदारी के लिए उनके तर्कों का हवाला देते हैं। हाल के वर्षों में सकारात्मक कार्रवाई, जाति की जनगणना और आरक्षण नीतियों पर बहसें अम्बेडकर के न्याय के दृष्टिकोण की चर्चाओं पर भरोसा करती हैं। जबकि कुछ का तर्क है कि आरक्षण नीतियों का पुनर्मूल्यांकन किया जाना चाहिए। अन्य इस बात पर जोर देते हैं कि जाति-आधारित असमानताएँ गहराई से उलझी हुई हैं, जिससे इन नीतियों को वास्तविक सामाजिक लोकतंत्र को प्राप्त करने के लिए आवश्यक बना दिया गया है। उनके विचारों का अध्ययन वैश्विक भेदभाव और सामाजिक न्याय आंदोलनों में किया गया है, जो नस्ल, जाति और आर्थिक उत्पीड़न से संबंधित मुद्दों पर काम करने वाले विद्वानों और कार्यकर्ताओं को प्रभावित करते हैं। संवैधानिक नैतिकता, सामाजिक न्याय और समानता पर उनके विचार मानवाधिकारों, अल्पसंख्यक सुरक्षा और दुनिया भर में राजनीतिक प्रतिनिधित्व पर चर्चा में प्रतिबिंबित होते हैं।

6. निष्कर्ष

अंबेडकर का दर्शन समकालीन समाज में न्याय और समानता के संरचनात्मक असमानताओं को संबोधित करने के लिए एक महत्त्वपूर्ण रूपरेखा बना हुआ है। संवैधानिक नैतिकता, आर्थिक सशक्तिकरण और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में उनके विश्वास ने हाशिए के समुदायों के सामाजिक परिवर्तन के लिए एक मजबूत आधार प्रदान किया है। भारत ने अंबेडकर के समय से महत्त्वपूर्ण कानूनी और राजनीतिक प्रगति की है परंतु जाति भेदभाव, आर्थिक असमानता और लैंगिक असमानता की दृढ़ता की चुनौतियाँ उनकी दृष्टि की निरंतर प्रासंगिकता को रेखांकित करती हैं। दलित अधिकारों, लैंगिक न्याय, श्रम सुरक्षा और न्यायसंगत आर्थिक विकास के लिए चल रहे संघर्ष से पता चलता है कि उनके विचार सामाजिक आंदोलनों और नीतिगत चर्चाओं को प्रेरित करते हैं। सशक्तिकरण के लिए एक उपकरण के रूप में शिक्षा पर उनका जोर, सकारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता मानवाधिकारों, भेदभाव-विरोधी नीतियों और आर्थिक न्याय पर चर्चा और जाति के पदानुक्रमों का विघटन आधुनिक भारत की सामाजिक न्याय के लिए खोज में एक मार्गदर्शक बल है। उनकी दृष्टि समावेशी शासन के लिए एक खाका के रूप में कार्य करती है और यह सुनिश्चित करती है कि हर व्यक्ति, जाति, वर्ग या लिंग की परवाह किए बिना, अवसरों और गरिमा का उपयोग कर सकता है। जब तक प्रणालीगत उत्पीड़न और असमानता मौजूद है तब तक अंबेडकर के विचार आशा और प्रतिरोध की एक मशाल बने रहेंगे। उनका दर्शन समाज के लोगों से आग्रह करता है कि वे प्रतीकात्मक सुधारों से आगे बढ़ें और वास्तविक सामाजिक परिवर्तन की दिशा में काम करें। अब यह सरकारों, नीति निर्माताओं, कार्यकर्ताओं और नागरिक समाज की जिम्मेदारी है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उनकी स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के आदर्शों को बरकरार रखा गया है। न्याय केवल एक अमूर्त सिद्धांत नहीं है, बल्कि सभी के लिए एक जीवित वास्तविकता है।

REFERENCES

अंबेडकर, बी. आर. (1946). शूद्र कौन थे?, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार, पृ. 45-56।
अंबेडकर, बी. आर. (1949). संविधान सभा में भाषण, भारत सरकार, पृ. 210-225।
अंबेडकर, बी. आर. (1957). बौद्ध और कार्ल मार्क्स, महाबोधि प्रकाशन, नागपुर, पृ. 78-89।
ओमवे, जी. (2004). अंबेडकर: टुवार्ड्स एन एनलाईटेंड इंडिया, पेंगुइन बुक्स, नई दिल्ली, पृ. 134-150।
थोराट, एस. (2019). असमानता और सामाजिक न्याय: अंबेडकर का दृष्टिकोण, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, पृ. 98-112।
कुमार, र. (2015). अम्बेडकर और भारतीय समाज में न्याय की अवधारणा, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, पृ. 67-82।
ज़ेने, जी. (2021). दलित राजनीति और अंबेडकरवादी विचारधारा, सेज पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, पृ. 55-73।
अय्यर, आर. (2017). भारतीय संविधान और सामाजिक समानता, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, पृ. 120-138।
बागुल, बी. (2002). दलित साहित्य और अंबेडकरवादी आंदोलन, विद्या प्रकाशन, पुणे, पृ. 90-105।
तिवारी, एस. (2020). अंबेडकर के विचार और समकालीन भारत, नेशनल बुक ट्रस्ट, भोपाल, पृ. 145-162।